□□□□□□□□ □□□□□□

जनसत्ता 27 अगस्त, 2014 : यह बात मुझे क्यों याद आ रही है? यह बात दोबारा दिमाग में उठ रही है। पहले तब उठी थी जब

आपातकाल के दौरान तत्कालीन प्रधानमंत्री ने कहा था कि न्यायपालिका प्रतिबद्ध होनी चाहिए। आपातकाल के बावजूद हर तरफ से आवाजें आने लगी थीं कि अगर न्यायपालिका सरकार के अधीन हो गई तो भारत की आजादी का क्या होगा? तब संभवत: जेपी भी जीवित थे। लोग झूठे इलजाम लगा कर जेलों में ठूंस दिए गए थे।

लेकिन मैं समझता हूं कि इंदिराजी ने इस बात को खुले तौर पर स्वीकार करके गलती की थी, हालांकि जन-मानस को इसका फायदा हुआ था। सार्वजनिक विरोध के कारण संभवत: इस मंसूबे को अमली रूप नहीं पहना पाई थीं। कोई ढांचा तोड़ना मुश्किल होता है। अलबत्ता किसी ऐसी ईंट को सरका दिया जाना कि ढांचा स्वत: धीरे-धीरे छीज जाए, न ईंट खिसकाने वाले का पता चलता है और न ढांचे के गिरने का कारण पता चले, राजनीति कहलाती है।

तब संसद में भाजपा के सदस्य सीमित थे। जनतंत्र की रक्षा की लड़ाई के सेनापति जयप्रकाश नारायण थे। उन्हीं की आवाज देश में गूंज रही थी। संपूर्ण क्रांति का मंत्र अच्छे दिन आएंगे वाले मंत्र से अधिक सिद्ध था। इसी मंत्र ने सब दलों को एक कर दिया था। उनमें भाजपा भी थी। जेपी ने समझा कि संपूर्ण क्रांति के इस मंत्र ने सबके दिलों से राजनीतिक कलुष को निकाल कर, दिल मिला दिए। उसका सबसे ज्यादा लाभ भाजपा को मिला।

जब जनता पार्टी की सरकार बनी तो कई महत्त्वपूर्ण मंत्रालय भाजपा के पास आ गए। कृपलानीजी और जेपी अच्छे मित्र थे। कृपलानीजी ने जेपी से कहा तुम यह ठीक नहीं कर रहे। देश की वही स्थिति होगी... जो आज है। जेपी जनता सरकार के मंत्रियों को राजघाट पर शपथ दिलाने के समय कृपलानीजी को भी साथ ले गए थे, पर वे खुश नहीं थे। मुझे नहीं मालूम आज वैसी स्थिति है या बेहतर या बदतर है।

न्यायाधीशों की नियुक्ति के लिए बनने वाले आयोग को लेकर मैं चकित हूं। कांग्रेस, वामपंथियों, समाजवादियों, तृणमूल कांग्रेस, राष्ट्रवादी कांग्रेस पार्टी, अन्नाद्रमुक आदि ने संसद में इस भाव से विधेयक पारित कर दिया जैसे बहुत क्रांतिकारी काम करने जा रहे हैं। इंदिरा गांधी के इस कथन पर कि न्यायपालिका प्रतिबद्ध होनी चाहिए, विरोध में देश मुखर हो उठा था, चाहे विश्वविद्यालय हों, वकील हों, राजनीतिक पार्टियां हों, छात्र हों, या अखबार। आज मीडिया की तो आवाज ही नहीं निकल रही।

लेकिन लगता है, एक वह बुनियादी ईंट निकल गई है, अभी किसी को पता नहीं कि इसका पूरे ढांचे की मजबूती पर क्या असर होगा। निकालने वाला मिस्त्री

बहुत पटु है□ मैंने भी फेसबुक पर लिखा था कि आयोग होना चाहि□ जिससे पारदर्शिता नजर आ□□ यह तो अल्प-पारदर्शी नजर आ रहा है□ इतनी तुरता-फुरती बना है कि क्यों, क्या, कैसे पता ही नहीं चला□ ठीक वैसा ही हुआ जैसे सीसेट का सवाल हिंदी बनाम अंगरेजी का सवाल बन गया□ कहा था छात्रों की बात सुनी जा□गी□ बात हुई ही नहीं, तो सुनने का सवाल ही कहां उठता है□

अटल बिहारी वाजपेयी संयुक्त राष्ट्र में हिंदी में भाषण देते थे, लौट कर कहते थे कि विदेश में हिंदी बोलना आसान है, देश में मुश्किल□ खैर, भाषा की दुर्गति तो जब से देश आजाद हुआ निरंतर हो रही है□ देश यह सोचने को मजबूर किया जा रहा है कि उनकी भाषा भाषा नहीं, भाषा वही है जिसे सरकार और नौकरशाही अपनी अभिव्यक्ति का माध्यम मानती है□ भले ही प्रधानमंत्री हिंदी का प्रयोग करते हों!

मैंने न्यायाधीशों की नियुक्ति के लि□ आयोग का प्रस्ताव तब किया था जब सुब्रमण्यम का नाम सुप्रीम कोर्ट में होने वाले जजों की सूची से हटाने के लि□ सीबीआइ का तोता उ□ कर आ बैठा था□ बाद में अमित शाह के वकील रहे ललितजी को भी जज बनाया गया□ इत्तफाक से दोनों का संबंध अमित शाह के मुकदमों से है□ □क समर्थन में थे, दूसरे विरोध में□ यह कहना सरलीकरण हो जा□गा कि पक्ष बाहर अंदर, दूसरा बाहर□

मैं यह नहीं मानता कि आयोग के पीछे मेरा सुझाव है□ ऐसे सुझाव टके सेर बिकते हैं□ लेकिन मैं सोच रहा था कि अगर आयोग बना तो इस पर विस्तृत चर्चा होगी- शीर्ष न्यायविदों, वकील संगठनों, सुप्रीम कोर्ट के सेवानिवृत्त जजों, संसद में विभिन्न पार्टियों के नेताओं (हालांकि वे संसद में ही कुछ नहीं कर पा□ तो अलग से क्या करते), मुख्यमंत्रियों, विश्वविद्यालयों के विधि विभागों आदि के साथ चर्चा करके आयोग बनाया जा□गा□ जाहिर तौर पर प्रधानमंत्री (वे तो सर्वेसर्वा हैं), कानूनमंत्री, संभवत: वित्तमंत्री, रक्षामंत्री और महाधिवक्ता मशविरे में शरीक रहे होंगे□

कानून मंत्रालय के सचिव तो होंगे ही□ इतना महत्त्वपूर्ण मसला, जिस पर जनतंत्र का अस्तित्व निर्भर है, केवल कानाफूसी से कैसे तय हुआ और संसद ने भी ध्वनिमत से पास कर दिया□ राज्यसभा भी जैसे तैयार बैठी थी□

अखबार में जब इस आयोग के गठन के बारे में प□ा तो कुछ सवाल दिमाग में आ□□ फिर फली □स नरीमन साहब की राय अखबारों में प□ी□ भारत के मुख्य न्यायाधीश का वक्तव्य सुना, जिसका मतलब था न्यायपालिका को तोता न बनाओ□ भाजपा के प्रवक्ता का स्पष्टीकरण सुना कि संविधान में जज नियुक्त करने का अधिकार सरकार को दिया गया था, उसके साथ छे□ छा□ की गई थी, हमने उसी को बहाल कर दिया□

सरकार बने दो महीने हु□, सवा लाख फाइलों को छांट कर नष्ट कर दिया गया और अब जजों की नियुक्ति के लि□ मनमाने ढंग से आयोग बना दिया गया□ जब प्रवक्ता का कहना है कि यह काम संविधान ने सरकार को दिया है तो उस अधिकार को कौन चुनौती दे सकता है! पर दो ढंग थे□ □क, जनतंत्रात्मक ढंग□ जन समर्थन से सरकार बनती है□ जनतंत्र के सबसे महत्त्वपूर्ण पा□ के बारे में न सही जन समर्थन के आधार पर, जानकार लोगों से मशविरा करके संसद में जाया जा सकता था□ अब जो हो गया सो हो गया□ पर कुछ सवाल है:

□क, प्रधान न्यायाधीश अपनी सेवा के अंतिम सोपान में होता ही होता है□ सर्वोच्च और दो अन्य वरिष्ठतम जजों का भी सामान्यत: अवकाश प्राप्ति का समय ही होगा□ उनकी व्यक्तिगत आकांक्षा हो भी सकती है, नहीं भी हो सकती□

दो, कानूनमंत्री का सदस्य होना क्या आयोग का राजनीतिकरण नहीं? वह वकील हो भी सकता है नहीं भी, यह प्रधानमंत्री पर निर्भर करता है।

तीन, दो सदस्य प्रधानमंत्री, कानूनमंत्री, विरोधी दल के नेता और मुख्य न्यायाधीश की सलाह से मनोनीत किए जाएंगे। पता नहीं यह राजनीतिकरण है या नहीं। चयन करने वाले तीन राजनीतिक और अकेला प्रधान न्यायाधीश?

आयोग में छह सदस्य होंगे। वैसे तो ऐसी स्थिति शायद ही हो जब दोनों तरफ समान मत हों। दो मनोनीत सदस्य किस वर्ग के होंगे यह तो स्पष्ट नहीं, पर यह संभव हो सकता है कि वे राजनीतिक संवर्ग से ही हों, तो वे कानूनमंत्री की नजर से निर्देशित हो सकते हैं। यह भी हो सकता है कि दोनों मनोनीत सदस्य दो अलग-अलग वर्ग के हों, पर वे राजनीतिक प्रभाव क्षेत्र के बाहर नहीं होंगे।

चार, न्यायपालिका के कोटे में से भी कोई सदस्य राजनीतिक प्रभाव का लाभ उठाने के फेर में हो सकता है। इस संभावना से इनकार नहीं किया जा सकता कि निर्णय के समय छह सदस्यों में से तीन एक तरफ और तीन दूसरी तरफ बंट जाएं, ऐसे में निर्णय कैसे होगा यह स्पष्ट नहीं है। क्या प्रधान न्यायाधीश यानी आयोग के अध्यक्ष को कास्टिंग यानी दूसरे वोट का अधिकार होगा?

पांच, एक अहम प्रावधान पर ध्यान जाना आवश्यक है। अगर दो सदस्य किसी नाम पर असहमत होते हैं तो आयोग उस नाम पर विचार नहीं करेगा, यानी चार सदस्यों की राय को वीटो करने का अधिकार केवल दो सदस्यों के पास होगा। असहमत कोई भी दो सदस्य हो सकते हैं। असहमत होने की संभावना दो मनोनीत सदस्यों की ही है। सरकार किसी भी नाम को इस प्रक्रिया से चयन से बाहर करा सकती है। अगर उन दो सामान्य वर्ग के सदस्यों में से एक किसी कारण से उसके लिए तैयार न भी हो तो कानूनमंत्री तो मौजूद होंगे ही। कानूनमंत्री की उपस्थिति से आयोग की विश्विसनीयता पर सवाल लगा है।

कहते हैं स्टालिन हर समिति में अपना विश्वासपात्र रखता था। वैसे भी इस तरह के आयोग में सदस्य संख्या या तो पांच होनी चाहिए या सात, जिससे निर्णय में पारदर्शिता बनी रहे। हो सकता परिकल्पना पांच की रही हो, बाद में कानूनमंत्री का नाम सम्मिलित किया गया हो। बेहतर तो यही होता कि एकमत निर्णयों पर जोर दिया जाता। लगता है सरकार दोनों हाथ में लड्डू रखना चाहती है। नापसंद नाम दो सदस्यों के विरोध से पहले ही कट जाएं, बाकी सब नियुक्तियां निर्विरोध मान ली जाएंगी। मुख्य न्यायाधीश की स्थिति हास्यास्पद तो कहना गलत होगा, त्रिशंकु की हो सकती है।

कार्यपालिका द्वारा आयोग का ढांचा जनहित और जनतंत्र के हित में नजर नहीं आता। अगर सरकार आयोग के सदस्यों के रूप में प्रतिबद्ध सदस्य ले आती है तो धीरे-धीरे न्यायपालिका का स्वरूप प्रतिबद्धता की ओर झुकता जाएगा। इंदिराजी जो सपना पूरा नहीं कर पाईं उसे अब मोदी सरकार अपनी तरह पूरा कर लेगी। न्यायपालिका का चाहे जितना भी ह्रास हुआ हो, जनमानस का सरकारों और प्रशासन से ज्यादा उसी पर विश्वास है।

जब प्रशासन सताता है, शासन का बुलडोजर चलता है तो पीड़ित व्यक्ति सब कुछ बेच कर न्यायपालिका और ईश्वर की शरण में यह सोच कर जाता है कि सर्वोच्च न्याय पंचायत न्याय देगी। आयोग और इसके द्वारा की जाने वाली नियुक्तियां आम आदमी के उस विश्वास और आस को तोड़ देंगी। मैं जानता हूं जनहित की बात किसी भी सरकार की समझ में देर से आती है। तोतों से बहुत डर लगता है, वे चमन में लगे फलों को कुतर कर बरबाद कर देते हैं। उच्चतम न्यायालय ने कहा था, सीबीआइ सरकार का तोता है। अब क्या? छोड़िए।

फेसबुकपेज को लाइककरने केलि क्लिककरें- https://www.facebook.com/Jansatta

ट्विटिर पेज पर फॉलो करने केलि क्लिककरें- https://twitter.com/Jansatta